

भारतीय राष्ट्रवाद: अध्ययन दृष्टिकोण और प्रवृत्तियां

डॉ. राकेश कुमार चौधरी

सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग,
टी. एस. कॉलेज हिसुआ, मगध विश्वविद्यालय बोधगया

Article Info	ABSTRACT
Article History: Received: 15th Dec 2025 Accepted: 18th Dec 2025 Published: 20th Dec 2025	राष्ट्रवाद की अवधारणा और सन्दर्भ परिधि आधुनिक, नब विकसित और औपनि-बेशिक दासता से मुक्त परम्परागत समाजों की राजनीतिक विचार एवं क्रिया व्यवस्था में रखी जा सकती है। राष्ट्रवाद का विचार, अन्वेषण-लेखन में प्रथमतः समाजशास्त्री, आधुनिक इतिहास और राजनीतिक इतिहास की ओर आकृष्ट होता है भारतीय राजनीतिक इतिहास की सामग्री प्रायः पिछले डेढ़ सौ वर्षों में फैलो विस्तृत फलक पर राष्ट्रवादी आन्दोलन के विकास का ही मुख्य इतिहास है। यदि हम आधुनिक राष्ट्र की परिकल्पना करें तो कई विशेषताएँ जो एकदम तटीक है भारतीय समाज के पिछले अतीत और आधुनिक इतिहास खण्ड से प्राप्त होंगी। औपनिवेशिक दबावों और एक गौरवशाली अतीत की धरोहर वाले कवीलाई समाज से भिन्न मतांतरों वाले धार्मिक जीवन और सांस्कृतिक समाजों के सन्दर्भ में राष्ट्रवाद का विकास कई चरणों में हुआ है। इस लेख में समस्त सैद्धांतिक एवं अनुभवजन्य प्रतिपादन भारतीय राष्ट्रवाद की समीक्षा के माध्यम से किया गया है। किस प्रकार राष्ट्रवाद की धारणा सही रूप में भारतीय समाज को ऐतिहासिक ढाँचे में उतारते हुए आधुनिक लोकतन्त्र, संवैधानिक शासन व्यवस्था और राज व्यवस्था (स्टेट सिस्टम) को चलायमान रखती है। इन सभी प्रश्नों को जानना वर्तमान सदी और आगामी सदी के राजनीतिक भविष्यवाणी-वक्ताओं की तुलना में समाज विश्लेषकों (सोशल साइंटिस्ट) के द्वारा की जाय तो अधिक प्रासंगिक आकलन हो सकता है।

Plagiarism Check Report:

Date of Report: Dec 17, 2025

Similarity Index: 5%

Remarks: No significant matching text. All citations and matches are properly referenced. The manuscript is considered original.

Copyright © 2025 The Author(s). This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License, (<http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/>) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.

How to Cite: Chaudhary, R. K. (2025). भारतीय राष्ट्रवाद: अध्ययन दृष्टिकोण और प्रवृत्तियां. *IIP: World Journal of Humanities and Social Sciences (IIPWJHSS)*, 1(VI), 2141-2145.

प्रस्तावना –

मैकडोनाल्ड का कहना है कि “भारतीय राष्ट्रवाद राजनीतिक मण्डलों का आन्दोलन ही नहीं, अपितु बहुत कुछ रहा है, यह एक ऐतिहासिक परम्परा का पुनर्जीवन है, एक राष्ट्र की आत्मा की मुक्ति है।”

राष्ट्रवाद के इतिहास की प्रथम अवधारणा यूरोपीय इतिहास के स्वतन्त्रता के गृह युद्ध, चर्च बनाम राज्य, तानाशाही बनाम लोकतन्त्र, नये राष्ट्रों का उदय और आकस्मिक राजनीतिक प्रणालियों के उदय से हुआ है। आधुनिक राष्ट्रवाद के उदय में चर्च बनाम राज्य (स्टेट) के संघर्ष में चर्च की सत्ता के पराभव के साथ हुआ। प्राचीन राज्यशास्त्री या राजनीतिक दर्शन-शास्त्री मैकियावेली (१४६९-१५२७) को प्रथम राष्ट्रवादी कहा जाता है। इटली में राष्ट्रवाद की स्थापना का श्रेय इसे ही जाता है। पुनर्जागरण (रिनेसा) ने यूरोप में राष्ट्रवाद (नेशनलिज्म) फैलाया, इंग्लैंड के राष्ट्रवादी दर्शन का प्रसार अमेरिका में हुआ। फील्से, हीगल जैसे विचारकों (सन् १८८०) के पश्चात् यूरोप के राष्ट्रवाद के विकास में औद्योगिक क्रान्ति से यूरोप के आर्थिक राष्ट्रवाद का विकास हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् एशिया और अफ्रीका के देशों में राष्ट्रीय भावना का प्रसार तीव्र गति से होने लगा था। आधुनिक राष्ट्रवाद की भावना के उत्प्रेरकों में आर्थिक शोषण और असमानता समाप्त करने की ललक, नस्लवाद की समाप्ति मुख्य थे। राजनीति विज्ञानी सी० जे० एच० हैम्स की मान्यता है कि “राष्ट्रवाद दो पुरानी मान्यताओं राष्ट्रीयता और देश प्रेम का आधुनिक एवं अतिशयोक्तिपूर्ण मिश्रण है।” इसके विपरीत कवि, चिन्तक रवीन्द्रनाथ टैगोर का कथन है कि “राष्ट्रवाद आत्म जाप (सेल्फ आइलोटेरी) तथा स्वार्थ सिद्धि का राजनीतिक तथा आर्थिक संगठन है।” स्पष्टतः इस निष्कर्ष पर आते हैं कि आधुनिक राष्ट्रवाद की यूरोपीय धारणा से अलग भारतीय राष्ट्रवाद का विकास हुआ है। भारतीय राष्ट्रवाद के चिन्तना-परिधि में आधुनिक सीमान्त तत्त्व के रूप में है।

भारत में राष्ट्रवाद का कालक्रम निम्नलिखित है-

प्रथम चरण १८८५ तक: राजाराम मोहन राय युग

द्वितीय चरण १८८५ से सन् १९०५ तक

तृतीय चरण १९०५ से सन् १९१८ तक

चतुर्थ चरण १९१८ से १९३०-३४ तक

पंचम चरण १९३४ से १९३९ तक द्वितीय विश्व युद्ध के आरम्भकाल तक

उपर्युक्त कालक्रम प्रो० ए० आर० देसाई (१९५६: ३५०-३५७) ने नियत किया है। द्वितीय चरण में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना, शिक्षित मध्यम वर्ग का राष्ट्रीय आंदोलन की परिधि में प्रवेश, ब्रिटिश उदारवाद का प्रभाव, आधुनिक लोकतंत्र का प्रसार, तिलक, पाल, लाजपत राय गरमपंथियों का बढ़ता जनमानस पर प्रभाव के ऐतिहासिक वर्णन सम्मिलित है। तीसरे चरण में अतिवादी नेतृत्व और तेजी से जोर पकड़ते स्वदेशी आन्दोलन, साम्प्रदायिक संगठनों के गठन (मुस्लिम लीग) का प्रवाह झेला। चतुर्थ चरण में राष्ट्रीय आन्दोलन को जना-धार व्यापक स्तर पर प्राप्त होना, १९३०-३४ का नागरिक अवज्ञा आन्दोलन मुख्य सत्ता थी। कांग्रेस संगठन का नगरीय मध्यवर्ग और पूंजीपति वर्ग पर प्रभाव पड़ना तथा बढ़ती साम्प्रदायिकता का खतरा इस काल में व्याप्त रहा। स्पष्ट रूप से भारत में नये बुद्धिजीवी राजनीतिक चेतनाशील वर्ग का विकास इस काल में ‘नेतृत्व’ स्तर पर सक्रिय हो चुका था। गाँधीवाद का प्रवेश पाँचवें चरण के दौरान होता है। इसके दौरान कम्युनिष्ट आन्दोलन का अधिक महत्वपूर्ण तथा तेजी से विकास हुआ। किसान सभा, ट्रेड यूनियन को नगरीय तथा देहाती क्षेत्रों में लोकप्रियता प्राप्त हुई। राष्ट्रीय आन्दोलन एवं वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया तीव्र हुई। संगठन के तौर पर वामपंथी संस्थाओं की सामाजिक जीवन में जड़े मजबूत हुई। उल्लेखनीय यह है कि राष्ट्रीय आन्दोलन और पूंजीपति वर्ग को भी इतिहासज्ञों ने अनदेखी नहीं की है। राष्ट्रवाद की सामाजिक शक्तियों में ‘वर्ग’ की धारणा का समावेश हुआ है।

महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि निरक्षर, देशज समाज के धनहीन, विपन्न लोगों ने भी राष्ट्रीय चेतना की आवाज सुनी और वे अपने-अपने इलाके के आन्दोलनों में कूद पड़े इससे राजनीतिक चेतना को विकास का प्रमाण मिलता है। उत्तर भारत में राष्ट्रवादी भावना सर्वो-कृष्ट स्तर पर थी।

चेतना का विकास शोषण का परिणाम होता है। ब्रिटिश शासन में आर्थिक शोषण ने लोगों को झकझोर दिया था। १७५५ ई० तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यावसायिक रूप ने लूट करने वाले सूद खोर का रूप ले लिया तो १८५७ ई० तक भारतीय जनता

त्रस्त होकर बगावत पर उतर आयी। आर्थिक दुर्दशा का वर्णन रजनी पाम दत्त की कृति, भारत वर्तमान और भविष्य, रामविलास शर्मा कृत, भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद (दो खण्डों में) विशेष रूप से पठनीय हैं। रमेशचन्द्र दत्त, दादाभाई नौरोजी (पावर्टी अण्ड ब्रिटिश रूल इन इण्डिया) में भी दुर्दशा का तथ्यगत वर्णन मिलता है। भारत में किसानों का आन्दोलन चलता रहा। विशेषकर १९२२ का मोपला विद्रोह एक आर्थिक विद्रोह था, जिसमें मोपला के किसानों ने मालावार के नम्बूद्री ब्राह्मण जमींदारों के शोषण के विरुद्ध बगावत की थी। १९२३ में आन्ध्र में रैयतों और खेतीहर मजदूरों के स्वतन्त्र संगठन बने। १९२६-२७ में पंजाब-बंगाल एवं उत्तर संयुक्त प्रान्त के किसान सभा में पंडित नेहरू ने भी रायबरेली क्षेत्र में सक्रिय रह कर काम किया था, इनमें गुजरात के वारदौली के दो आन्दोलन (१९२८-२९ और १९३०-३१) सफल रहे। १९३०-४७ के दौरान किसान आन्दोलनों के जड़ सिचन का काम राष्ट्रीय चेतना के प्रसार से हो रहा था। अवध के किसानों की बगावत के भी एक प्रेरक रामायण के वाचक बाबा रामचन्द्र थे तो दूसरी प्रेरक शक्ति राष्ट्रीय आन्दोलन की चेतना थी। कपिल कुमार ने अपने लेख में इस तथ्य को विस्तार से लिखा है कि किस प्रकार धार्मिक चेतना का पुनरुत्थान राष्ट्रवादी चेतना में हो सकता है जैसा कि १९२०-५० के दौरान एक विद्रोही विचार (रैडीकल) के लिए राम चरित मानस का प्रयोग किया गया। उत्तर प्रदेश में धार्मिकता और राष्ट्रवाद दोनों के केन्द्र काशी और अवध रहे। इन स्थानों पर बड़े पैमाने पर लगने वाले धार्मिक संस्कार एवं मेलों पर देहाती लोगों के बीच मालवीय जो, गाँधी जी, नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस एवं अन्य नेताओं के विचार और निकटता से प्रचारित हुए, जिससे संयुक्त प्रान्त का देहात पूरी तरह से राष्ट्रीय चेतना के दबाव में सुलग उठा यह सुलगती चिनगारी अंग्रेजी के खिलाफ बगावत करती थी और प्रखर राष्ट्रीयता की नींव भी स्थापित करने में मददगार रही।

अध्ययन दृष्टिकोण

राष्ट्रवाद के मार्क्सवादी विश्लेषणों में रामविलास शर्मा, ए०आर० देशाई, विपिनचन्द्र, मृदुला मुकर्जी आदि विद्वानों का उल्लेख करना सामयिक होगा। समकालीन और आधुनिक खण्ड के इतिहास लेखन में यह प्रवृत्ति मार्क्सवादी विश्लेषण को ही पकड़ती है। डी० डी० कीसाम्बी के प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्व विश्लेषण को भी स्मरण किया जा सकता है। पूरी पकड़ और सजगता का परिचय प्रो० देशाई की कृति भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि में दिखाई पड़ती है। उन्होंने स्वातंत्र्योत्तर भारत में राष्ट्रवाद एवं अन्य प्रवृत्तियों का भी अध्ययन करके उसे राष्ट्रवाद की अधुनातन प्रवृत्तियाँ ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार समाजशास्त्रीय कार्य के लिए प्रो० देशाई का ग्रंथ सबसे अधिक पथ प्रदर्शक है। मार्क्सवादी विश्लेषण से निकट नव मार्क्सवादी लेखन में पुनः हम समाज के दबे हुए वर्ग का इतिहास या सब आल्टर्न हिस्ट्री की चर्चा करते हैं। इस पर चर्चा अभी भारतीय इतिहासकारों में विद्यमान है कि इतिहास लेखन की सजगता किस तरह के दृष्टिकोण से बनी रहेगी। समाज के या सीमान्त वर्गों के इतिहास में सम्भवतः क्लासिकल या परम्परागत इतिहास का दर्शन नहीं प्राप्त होगा परन्तु केवल क्रान्ति, अभिजन नेतृत्व तथा संगठित शहरी पूंजीपति वर्ग एवं देहात के सामन्तों तथा राजाओं का गौरवशाली वंश पुराण लिखने से नया इतिहास परहेज करता है। ऐतिहासिक क्रमबद्धता की खोज हम राष्ट्रवाद के यूरोपीय ढाँचे में भी कर सकते हैं, जहाँ स्पष्ट रूप से राष्ट्रवाद एक विशुद्ध वैचारिकी नहीं थाय परन्तु वैचारिकी से कहीं अधिक जनसाधारण के जीवन में उत्तरा था। राष्ट्रवाद को भारतीय परम्परा, वैचारिकी में हम ब्रिटिश शासन काल की या इसके दौरान पनपी प्रवृत्ति के रूप में देखे तो पायेंगे कि राष्ट्रवाद की ओर क्रमशः सामाजिक दशाएँ अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करने में सफल रही थीं। १८५७ से १९४७ तक का काल राष्ट्रीय आन्दोलन का सर्वाधिक सक्रिय काल था। इस काल में आधुनिकीकरण पुनर्जागरण (धर्म सुधार आन्दोलन, सामाजिक वर्गों का उदय और शहरीकरण की गति, अंग्रेजी शिक्षा, रेलवे, प्रेस आदि) के विभिन्न घटनाओं के सन्दर्भ में राष्ट्रवाद के कारणों और विकास का अध्ययन होना चाहिये।

‘नया इतिहास और सब आल्टर्न हिस्ट्री’ दृष्टिकोण से भी राष्ट्रवाद और अन्य प्रवृत्तियों, घटनाओं का जिन्हें लम्बा कालक्रम प्राप्त है, अध्ययन करना चाहिये। आज के इतिहासकार इस सहज एवं सजग इतिहास की ओर मुड़े हैं। कहा जाता है कि भारतीय समाज शास्त्र अमेरिकी सामाजिक मानवशास्त्र तथा हरवर्ड परम्परा (वारसंस, रावर्ट के मर्टन आदि) से प्रभावित और इंग्लैंड के मानवशास्त्र स्कूल के दबाव से अभी तक वैचारिक मुक्ति नहीं पाया यहाँ अन्तर्विरोध वर्तमान है कि स्वतन्त्र और अपना वस्तुगत समाजविज्ञान का भारतीय संस्करण कैसे बने साथ ही इतिहास लेखन की समस्या भी ऐसी रही है कि यह ऐग्लों-सेक्शन परम्परा से प्रभावित रही है। स्थितियाँ बदली हैं, आज राष्ट्रवाद को सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में अध्ययन किया जाना शुरू हो सका है (देखिये, अनिलशील, चार्ल्स हेसमिथ के ग्रन्थ) प्रो० देशाई की ऐतिहासिक कृति के पश्चात इस दिशा में समकालीन समाजशास्त्र

को और प्रयास चल रहा है। आर्थिक तत्त्वों के ऐतिहासिक महत्व को राष्ट्रवाद के विकास में सामने रखकर लेखन किया जाना चाहिये। इसी प्रकार राष्ट्रवाद और साहित्यिक परिदृश्य पर भाषा, जातीय परम्परा तथा क्षेत्रीय इतिहास का अध्ययन किया जाना चाहिये।

भारतीय राष्ट्रवाद की प्रवृत्तियों और अध्ययन दृष्टिकोण की समस्याएँ समझ कर 'नया इतिहास' लेखन आना चाहिये। राष्ट्रवाद में समाज के निर्बल वर्गों का योगदान पर भी विचार अभी अल्प प्रसिद्ध तथा अन्वेषण से सामने आया है। रंजीत गुहा के सम्पादकत्व में प्रकाशित सबबाल्टर्न स्टडीज १९८४, आक्सफोर्ड यू० प्रेस) के विभिन्न लेखों का दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। ऐतिहासिक पद्धति में संशोधन का यह प्रयास स्तुत्य है। ज्ञान पाण्डेय, शाहिय अमीन, हरवंश मुखिया, विपल चन्द्र, कपिल कुमार आदि इतिहासज्ञों के लेखन को 'नये ऐतिहासिक' दृष्टिकोण में रख सकते हैं। राष्ट्रवाद के बारे में विदेशी लेखकों के लेखों का प्रकाशन 'स्टडीज इन कम्परेटिव हिस्ट्री एण्ड सोसाइटी', में पास्ट एण्ड प्रेजेंट, न्यू हिस्ट्री आदि शोध पत्रिकाओं में होता रहा है। इस दिशा में अभिजनों का इतिहास लिखने के बजाय लोकजनों का इतिहास पढ़ना एवं लिखना अधिक प्रासंगिक होगा। राष्ट्रवाद और नवजागरण (रिनैसा) को एक साथ समझना महत्वपूर्ण है; क्योंकि भारतीय पुनर्जागरण के प्राथमिक घटनाओं में राष्ट्रवाद के संकेत मिलते हैं। नवजागरण की सामाजिक पृष्ठभूमि में समाज और साहित्य को लक्षित करते हुए लोकशाही या जनतन्त्रीय मूल्यों की स्थापना, सामन्तवाद और साम्राज्यवाद विरोधी तथा मानवतावादी मूल्यों की स्थापना में 'नवजागरण' सफल हुआ। साहित्य और ऐतिहासिक दृष्टि से भी राष्ट्रवाद के प्रारम्भिक प्रतिमानों में उत्तर भारतीय भाषायी और हिन्दी भाषा के उद्भूत राष्ट्रीय चेतना प्रखर मनस्वियों का योगदान या प्रभाव था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्याएँ (१९८४) पुस्तक में डॉ० रामविलास शर्मा ने हिन्दी के योगदान और भारतेन्दु साहित्य में प्रखर राष्ट्रीय चेतना पर प्रकाश डाला है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की दृष्टि समाज सुधार से लेकर स्वदेशी आन्दोलन तक गयी है। १८५७ के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम की ऐतिहासिक आधारशिला पर नवजागरण और राष्ट्रवाद अवस्थित है। हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल जहाँ से आरम्भ होता है वहाँ से साहित्य और समाज में नवजागरण और राष्ट्रवाद का विकास भी साथ ही साथ हुआ दिखता है। राष्ट्रवाद के चरणों के खोज में रीति काव्य युग के बजाय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के लेखन युग में सरलता से चिह्नांकन होगा।

प्रख्यात समाज शास्त्री ए० आर० देसाई ने भी प्रेस और समाचार पत्रों के योगदान की चर्चा की है। साहित्य और राष्ट्रवादी भावना के विकास का विश्लेषण बाद के लेखकों ने किया है। कतिपय मार्क्सवादी समालोचकों ने साहित्य और राष्ट्रवाद के विश्लेषण में स्थापित निष्कर्षों से हट कर प्रतिपादन किये हैं।

राष्ट्रीय स्वाधीनता की समस्याएँ साहित्यिक रचनाओं में उभरी हैं। विशेषकर हिन्दी के प्रखर लेखकों एवं चिन्तकों ने भाषा को ही अपनी लड़ाई का हथियार बना लिया था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की कृतियों में यह स्वर साफ सुनायी पड़ता है। 'भारत दुर्दशा', 'कवि वचन सुधा' कृतियों में राष्ट्रीय चेतना का संकल्प प्रकट होता है। काशी राष्ट्रीय चेतना के विकास का केन्द्र थी, यह एक अन्वेषण को विषय वस्तु हो सकती है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय, रचना काल के दौरान बनारस की राष्ट्रीय चेतना का विकास एवं प्रवाह किस प्रकार गतिशील रहा। विशेषकर १८५७ से १९४७ के दौरान का साहित्यिक विकास बनारस में नवजागरण और राष्ट्रीय आन्दोलन को समेटता है। इसका विश्लेषण 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण' (१९७७) में रामविलास शर्मा ने प्रस्तुत किया है। कतिपय साहित्य लेखन और मूल्यांकन कृतियों में काशी की राष्ट्रीय चेतना में मालवीय जी का योगदान, शिव प्रसाद सितारे हिन्द और 'आज' समाचार पत्र के संदर्भ-कोष और ग्रन्थों में विवरण मौजूद हैं। राष्ट्रवाद की प्रखर चेतना बनारस में मौजूद रही और नगरी बनारस के व्यापारी तथा किसान दोनों में राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने की ललक बढ़चढ़ कर मौजूद थी। प्रेमचन्द्र की कृति कर्मभूमि में भी १९३०-६० के बनारस की राष्ट्रीय चेतना का वर्णन नायक चरित्र से कहीं अधिक अन्य पात्रों की स्थितियों और घटनाओं के माध्यम से होता है। राष्ट्रवाद की चेतना में नीचे के हिस्से के लोगों का वर्णन इतिहासज्ञ अभी नहीं कर पाये हैं। परन्तु प्रयास चल रहा है कि क्षेत्रीय स्तर पर नीचे के सामाजिक स्तर के लोगों की 'चेतना' का वर्णन करने में ऐतिहासिक घटनाओं का पुनर्विश्लेषण किया जाय। इस प्रक्रिया में उत्तर भारत में राष्ट्रवाद के प्रसार और निचले तबके के लोगों की सक्रियता का अन्वेषण हो सकता है। उदाहरण के लिए बनारस के जुलाहे, कारीगर, किसान, छोटे व्यापारियों के राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान को सामाजिक इतिहास और समाजशास्त्रीय अध्ययन में 'ऐतिहासिक तथ्य' के रूप में लिया जा सकता है, जो राष्ट्रवाद के बारे में वास्तव में अधिक

प्रासंगिक अध्ययन माना जा सकता है।

भारतीय राष्ट्रवाद का इतिहास लेखन के दृष्टिकोण में नया इतिहास और निचले तबके के बारे में इतिहास की प्रवृत्ति स्वातन्त्र्योत्तर शोध कार्यों एवं इतिहास विश्लेषण में पायी गयी है। यह बुर्जुआ, अभिजातीय तथा मात्र एथनो-हिस्ट्री के दायरे से आगे सजगता और नयी समझ का नया इतिहास होगा। समाजशास्त्रीय कार्यों में प्रो० देसाई की प्रख्यात कृतियों के अनुसरण में ऐतिहासिक पद्धति के अनुगमन वाले कार्यों का स्वागत अकादमिक जगत में हुआ है। नया इतिहास और गैर पारम्परिक समाजविज्ञान को सजगता से भारतीय राष्ट्रवाद को पूरी गहराई से जाना जा सकता है। प्रस्तुत लेख में इसी तथ्य का वर्णन किया गया है कि भारतीय राष्ट्रवाद के बारे में भी लेखन दृष्टिकोण मार्क्सवादो एवं नव मार्क्सवादी दृष्टिकोण के समन्वय से आगे बढ़ रहा है। नवजागरण, हिन्दी साहित्य, देहाती निरक्षर समाजों के किसान विद्रोह, बनारस की भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की साहित्य गंगा और कतिपय साहित्यिक क्रान्तिकारी जैसे प्रेमचन्द्र के प्रसंगों का इस्तेमाल इस लेख में किया गया है, जो उन अनछुये पहलुओं की ओर संकेत करता है कि क्षेत्रीय इतिहास एवं समाजशास्त्रीय लेखन में राष्ट्रीय चेतना को अधिक गहराई से पाया जायेगा।

समाजशास्त्रीय अनुसन्धान में भी यह विषय क्षेत्रीय समाजशास्त्र और ऐतिहासिक अनुगमन पद्धति की महत्ता प्रतिपादित होती हैं। भारत में अंग्रेजी राज्य और मार्क्सवाद के बारे में या भारत के बारे में मार्क्स के विचारों के अलावा देशी लेखकों एवं साधु प्रवृत्ति के निराले चिन्तकों का, पुराने धर्म ग्रन्थों के जन मानस पर पड़े प्रभावों का अध्ययन करना चाहिये। इस दृष्टि से समन्वय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण या हिन्दी भाषा का राष्ट्रवाद में योगदान पर अध्ययन होना स्वागतेय होगा। क्षेत्रीय समाजशास्त्र की दृष्टि से राष्ट्रवाद के विकास की विभिन्न उपप्रवृत्तियों का चिह्नांकन अनुभवात्मक विश्लेषण से कर सकते हैं।

संदर्भ:

१. के० एन० पणिकर, 1983 आधुनिक भारत का सामाजिक और बौद्धिक इतिहास, (संकलित) आधुनिक भारत, सम्पादक, विपिन चन्द्र, मैकमिलन।
२. आर० ए० गार्डन-1975 दी हिन्दू महासभा एण्ड द इंडियन नेशनल कांग्रेस, 1915-26, मार्टन एशियन स्टडीज 9(2)।
३. रवीन्द्र कुमार-1984 एसेज इन द सोशल हिस्ट्री ऑफ मार्टन इंडिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
४. ए० आर० देसाई-1976 भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, मैकमिलन, हिन्दी अनुवाद।
५. विपिन चन्द्र-1976 भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास, मैकमिलन (हिन्दी संस्करण)